ज्ञान से परम पुरुषार्थ की सिद्धि

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

जीवन का परम पुरुषार्थ मोक्ष है। मानव जीवन के चार पुरुषार्थ हैं– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। मोक्ष अन्तिम पुरुषार्थ है। अज्ञान का अंधकार मिट जाने से आत्मा का स्वतः प्रकाश हो जाता है। आत्मा का अपने स्वरूप में स्थित होना मोक्ष है। ज्ञान ही वह दीपक है जो अज्ञान को दूर कर अन्तःकरण को ज्ञान से प्रकाशित करता है। इसीलिए कहा गया है– **ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः** अर्थात् बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं मिल सकती है। ज्ञान ही वस्तुओं के स्वरूप को प्रकाशित करता है। यह सत्य का साक्षात्कार करा देता है। अज्ञान बंधन है और ज्ञान मुक्ति। बंधरूपी फेविकोल इतना मजबूत होता है कि वह शीघ्र छूटता नहीं है। आत्मा को कर्मों से जोड़ने वाला बन्ध ही है। हृदय कुरुक्षेत्र है। यहां अच्छे और बुरे दोनों भाव उत्पन्न होते रहते है। हृदय में हर क्षण महाभारत होता रहता है।

अच्छे विचारों का कारण आत्मा है और बुरे विचारों का कारण कर्म है। जो जिसकी की प्रकृति होती है वह उसके साथ सदैव रहती है। उसको बदला नहीं जा सकता। नीम की प्रकृति कड़वी है। सैंकड़ों घड़े दूध से सींचे जाने के बावजूद भी उसको मीठा नहीं बनाया जा सकता। पतझड़ के बाद नये पत्ते आते है। वृक्ष में फल–फूल लगता है। धीरे–धीरे वृक्ष का विकास होता है। आत्मा के संबंध में भी यही है। मनुष्य जन्म–जन्मान्तर के कर्मरजों को लेकर पैदा होता है। वर्तमान जीवन में भी कर्म करता रहता है। कुछ कर्म शुभ होते है और कुछ कर्म अशुभ। दोनों प्रकार के कर्मों का बंधन होता है।

मुक्ति जीवन का परम लक्ष्य है। बन्धन से मुक्ति होती है। आसक्ति ही मनुष्य के बंधन का सबसे बड़ा कारण है। यह आसक्ति कर्ता भाव के कारण होती है। मुक्त होने के लिए कर्ता भाव का त्याग आवश्यक है। अज्ञान या अविद्या ही बंधन है। मैं और मेरापन बंधन है। यह धन सम्पत्ति मेरी है, परिवार मेरा है, पुत्र–पुत्री मेरे हैं, पत्नी मेरी है यह भाव बंधन है। मनुष्य वस्तुओं को तो अपना बना लेता है, किन्तु वह यह कभी नहीं सोचता कि मैं कौन हूँ? आत्मा

क्या है? जब यह भाव जागृत हो जाता है तो जीव आत्मोन्मुखी होता है। **जब जग जायें तभी सवेरा** अर्थात् मानव तो अज्ञान की नींद में सो ही रहा है। जब इस मोह निद्रा से उसकी मुक्ति हो जाये तो उसे अपना स्वरूप दिखने लगता है।

शरीर और आत्मा दोनों अलग–अलग है। शरीर पंच भूतात्मक है और आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। चौरासी लाख योनियों में सभी में आत्मा एकसमान है, केवल अभिव्यक्ति का अन्तर है। आत्मा का बंधन कर्ता भाव के कारण हे। हमने जैसा बीज बोया है, उसके कर्म के फल को प्राप्त करने के लिए यह शरीर मिला है। जीव अपने स्वरूप को समझ नहीं पाता। लेकिन उसे जैसे ही ज्ञान हो जाये मैं आत्मा हूँ, वैसे ही वह मुक्त हो जाता है। सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र मुक्ति के मार्ग हैं। सम्यक् ज्ञान हो जाने के बाद यह ज्ञात हो जाता है कि यह संसार मिथ्या है। जिस वस्तु को प्राप्त करने के लिए हमने जीवनभर प्रयास किया वह वस्तु मेरी नहीं है। वह पुद्गलों का समूह है। जो वस्तु मेरी है उसको तो मैंने पहचाना ही नहीं। यही वस्तु जब ज्ञात हो जाती है तो जीव मुक्त हो जाता है। मनुष्य के द्वारा किये गये कर्म फल देकर नष्ट हो जाते हैं। मनुष्य को संसार में रहते हुए विरक्त रहना चाहिए। जल में कमल की भांति जो व्यक्ति निर्लिप्त रहता है उसे कर्म बंधन नहीं होता।

बंधन का अर्थ है– परतंत्रता और मुक्ति का अर्थ है स्वतंत्रता। किसी भी तोते को यदि पिंजड़े में बांधकर रखा जाये और उसे खाने के लिए अच्छी–अच्छी वस्तुएं प्रदान की जाये फिर भी वह प्रसन्न नहीं रहता। वह मुक्त गगन में विचरन करना चाहता है। दार्शनिक दृष्टि से यदि हम चिंतन करें तो बंधन और मुक्ति जीव के लिए है। जिनसे कर्म बंधे या कर्मों का बंधना बन्ध है। जो बंधे या जिसके द्वारा बांधा जाये या बन्धन मात्र को बन्ध कहते हैं। कषाय सहित होने से जीव कर्म के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करता है, वह बन्ध हैं। कर्म प्रदेशों का आत्मप्रदेशों में एक क्षेत्रावगाह हो जाना, वह बन्ध है।

मिथ्यादर्शनादि द्वारों से आए हुए कर्म पुद्गलों का आत्मप्रदेशों में एक क्षेत्रावगाह हो जाना बन्ध है। बेड़ी आदि से बंधा हुआ प्राणी परतन्त्र हो जाता है। राग–द्वेषादि के निमित्त से जीव के साथ पौद्गलिक कर्मों का बन्ध निरन्तर होता है। जीव के भावों की विचित्रता के अनुसार वे कर्म भी विभिन्न प्रकार की फलदान शक्ति को लेकर आते हैं, इसी से वे विभिन्न स्वभाव या

प्रकृति वाले होते हैं। कर्मों का पूर्ण रूप से छूटना मोक्ष है। सम्यग् दर्शनादि कारणों से सम्पूर्ण कर्मों का आत्यान्तिक मूलोच्छेद होना मोक्ष है। जिस प्रकार बन्धन युक्त प्राणी स्वतन्त्र होकर यथेच्छ गमन करता है, उसी तरह कर्म–बन्धन मुक्त आत्मा स्वाधीन हो अपने अनन्त ज्ञानदर्शन सुख आदि का अनुभव करता है। मनुष्य गति से ही जीव को मोक्ष होना संभव है। आयु के अन्त में उसका शरीर कपूरवत उड़ जाता है और वह स्वाभाविक ऊर्ध्व गति के कारण लोक शिखर पर जा विराजता है, जहाँ वह अनन्तकाल तक अनन्त अतीन्द्रिय सुख का उपभोग करते हुए अपने चरम शरीर के आकार रूप से स्थित रहता है और पुनः शरीर धारण करके जन्म–मरण के चक्कर में कभी नहीं पड़ता। ज्ञान ही उनका शरीर होता है। इस प्रकार बंध और मोक्ष संसारी जीवों के होते हैं।